शोध मंथन Vol. XIV No.III July-Sep. 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में संवेदना के विविध आयाम

प्राप्तिः 29.08.2023
स्वीकृतः 15.09.2023

डॉ० शीनुल इस्लाम मलिक
प्रभारी, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
मुरादाबाद मुस्लिम महाविद्यालय, मुरादाबाद
ईमेलः *sheenulislam19@gmail.com*

58

सारांश

डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में संवेदना के विविध आयाम हमें दिखाई देते हैं। वे हिन्दी के बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न सर्जक साहित्यकार हैं। उनका भारतीय संस्कृति में अटूट विश्वास है। आज काव्य का लक्ष्य समाज के साथ–साथ व्यक्ति का स्वर बनना भी है। डॉ० महेश 'दिवाकर' ने संवेदना को उसकी व्यापकता में स्वीकार किया है इसलिए उनमें वैयक्तिक मानवीय, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि संवेदना के विविध स्वर स्पष्ट दिखाई देते हैं। वे ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि सभी साक्षर हों और सामाजिक समस्याओं का निराकरण करें ताकि देश उन्नति के पथ पर अग्रसर हो।

संवेदना शब्द की व्युत्पत्ति (सम्+विद्+ल्युट्) से हुई है, जिसका अर्थ है– प्रतीति, बोध, अनुभव करना, जताना, प्रकट करना[1]। संवेदना शब्द को कई अर्थों में लिया जाता है। साधारणतः इसको हिन्दी में सहानुभूति के अर्थ में लिया जाता है।

डॉ० हरिचरण शर्मा ने संवेदना सम्बन्धी अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किए हैं– ''संवेदना वे अनुभव हैं, जो व्यक्ति में घुलते हुए अनुभूति के रूप में छनकर आते हैं। रचनाकार तथ्यों को अपने बोध के अनुसार जब शब्दों में बाँध देता है, तब यही सत्य बन जाते हैं सत्य का यही रूप अनुभूति और कुछ तीव्र सूक्ष्म होकर संवेदना बनाता है। संवेदना के आस–पास का परिवेश, उसकी हलचल और उस हलचल में शामिल व्यक्ति की स्थिति, परिस्थिति और मनःस्थिति आधार का काम करती है।[2]

सृजन प्रक्रिया में संवेदना का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। किसी भी रचनाकार की कोई भी रचना संवेदना शून्य नहीं होती। संवेदना से भरपूर रचना ही पाठकों में रस निश्पत्ति कराने की क्षमता रखती है। संवेदना रहित रचना आत्मा विहीन शरीर के समान होती है। संवेदना के कारण ही कलाकार, शांति, उल्लास और शीतलता आदि भावों की अनुभूति कर पाता है। ईश्वर ने मानव को यह गुण सहज ही दिया है एक रचनाकार अपनी लेखनी के माध्यम से पाठक के मन में पात्र एवं परिस्थिति के लिए संवेदना उत्पन्न कर देता है। पाठक स्वयं को उसी परिस्थिति में अनुभव करने लगता है। एक रचनाकार की यह सबसे बड़ी विशेषता मानी गयी है। संवेदना का साहित्य सृजन में अत्यधिक महत्त्व है, क्योंकि यह एक प्रकार की विधायिनी शक्ति है। एक साहित्यकार की अनुभूति ही भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति पाती है। अनुभूति का मूल आधार अनुभव से उपजा जीवन सत्य है। यह जीवन सत्य ही संवेदना का मूर्तिमान रूप है।[3]

रचनाकार को आमजन से अलग करने वाली संवेदना ही है। उसे काव्य रचना के लिए प्रेरित करती है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को आसानी से हृदय में समा कर अपनी लेखनी के माध्यम से उसे शब्दों में कह सकता है लेकिन साधारण मनुष्य ऐसा नहीं कर पाता।

''प्रत्येक मानव सम्वेदनशील होता है फलस्वरूप उसमें सम्वेदन का गुण भी होता है किन्तु रचनाकार में यह संवेदना अधिक होती है। सम्वेदनशीलता से तात्पर्य अनुभूति की उस असाधारण शक्ति से है, जो कण–कण में सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवं अव्यक्त स्पन्दन को भी ग्रहण करने में असमर्थ है।[4]

जब किसी वस्तु या रचना का सृजन किया जाता है, तो रचनाकार की समस्त संवेदनाएँ एकत्रित होकर अभिव्यक्ति में लग जाती हैं। महादेवी वर्मा ने सम्वेदनशीलता को कलाकार का वास्तविक लक्षण माना है–

''सच्चा कलाकार व्यावसायिक कम पर संवेदनशील अधिक होता है।''[5]

इस प्रकार सृजन एक लम्बी प्रक्रिया है, जिसमें निरन्तरता है। काल का अविच्छिन्न प्रवाह है, जिसमें मनुष्य जाति तत्त्वबोध, रागबोध और सौन्दर्य बोध की त्रिवेणी का संगम होता है और वही उसकी मर्यादा तथा अनुशासन है। कला का सृजन किसी क्षण की उपलब्धि नहीं है, बल्कि दीर्घ साधना का प्रतिफल है।[6]

स्पष्टतः कहा जाता है कि सृजन प्रक्रिया में संवेदना का उतना ही महत्त्व है जितना पुष्प में सुगन्ध का, वायुमण्डल में वायु का, पानी में तरलता का और दिन में सूर्य का। संवेदनहीन काव्य सुगन्धहीन पुष्प के समान है। एक साधारण सी घटना जिस की ओर साधारण मनुष्य का ध्यान भी आकृष्ट नहीं होता वही घटना सम्वेदनशील व्यक्ति के मन में हलचल मचा देती है। संवेदनाएँ अपने परिवेश तथा स्थान विशेष के अनुसार बनती बिगड़ती रहती है। हर स्थान की परिस्थितियाँ तथा वातावरण अपना अलग महत्त्व रखते हैं। जो परिस्थितियाँ या समस्याएँ ग्रामीण जीवन की होती है ज़रूरी नहीं कि वही परिस्थितियाँ नगरीय जीवन की भी हों। दोनों ही परिवेश में वहाँ के निवासियों के आचार, व्यवहार में ज़मीन आसमान का अन्तर होता है। समकालीन काव्य में यथार्थ को अधिक महत्त्व दिया जाता है। रचनाकार परिवेश के प्रति जागरूक होने के साथ ही साथ संवेदनशील भी अधिक होता है। अन्त में हम यह कह सकते हैं कि संवेदना साहित्य रचना के लिए अनिवार्य तत्त्व है। साहित्य वही उत्तम माना जाता है जिसको पढ़कर सहृदय का ऐसा बोध हो जैसे वह उसके जीवन का ही अनुभव है। डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में संवेदना के कुछ विशिष्ट बिन्दु इस प्रकार हैं–

1. वैयक्तिक संवेदना

मनुष्य केवल सामाजिक तथा पारिवारिक दायित्वों में बंधकर ही जीवन नहीं जीता है बल्कि उसका 'स्व' भी कुछ महत्त्व रखता है। यह 'स्व' नितान्त उसका निजी तथा वैयक्तिक मामला होता है। अपनी इस वैयक्तिकता का भार उसे प्रायः अकेले ही ढ़ोना पड़ता है। जब व्यक्ति किसी भी कारण से 'स्व' को दूसरों पर प्रकट नहीं करना चाहता तबवह निपट अकेला होता है और यह एकाकीपन उसे अन्तर्मुखी बना देता है।[7]

आज का साहित्यकार वैयक्तिकता का प्रबल समर्थक बनता जा रहा है। काव्य का लक्ष्य समाज का स्वर न होकर व्यक्ति का स्वर बनता जा रहा है। आज का कवि स्वतंत्र सृष्टा है। उसका मानना है कि काव्य कवि की अनुभूति का परिणाम है और अनुभूति आत्मगत होती है, तो वह बाह्य प्रभावों से क्यों परिचालित हो। कवि के आत्मकेन्द्रित होने तथा शहरों के संवेदना शून्य जीवन और

अन्य बढ़ते मानसिक तनावों ने मनुष्य को अत्यधिक विकल बना दिया है। यही व्याकुलता उसके जीवन के एकाकीपन को बढ़ा रही है। यह एकाकीपन उसकी निजी संवेदना बनकर प्रत्येक वस्तु को उसी दृष्टिकोण से देखने पर विवश कर देता है। इन्हीं कारणों के वैयक्तिक सम्बन्धों का टूटना अथवा इनके प्रति विरक्ति मानव की वैयक्तिक संवेदना बनकर उभरती है। आज कवि का मुख्य विषय 'व्यक्ति' ही है। वह व्यक्तिगत चेतना के चित्रांकन में विश्वास रखता है। इसी को साहित्य में वैयक्तिकता का नाम दिया गया है। डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में मानव प्रेम की सहज अभिव्यक्ति दिखाई देती है, वे 'मैं कुछ करूँगा' कविता में समाज के लिए कुछ करना चाहते हैं–

कुछ न कुछ तो मैं
करूँगा ही .....।
अब तक जिसे मैं कर न सका,
मेरा मन जिसे कह न सका,
उसे लिखूँगा ही .....।
बस इसी क्रम के ताने–बाने में
मेरी ज़िदगी की शैय्या
बुन जायेगी।
मन की साध पूरी हो जाएगी।[8]

बचपन की यादों का एक चित्र सा प्रस्तुत करते हुए वे कहते हैं कि–

कैसा अद्भुत मीठा रस था!
उस मधुरिमा बचपन का,
जब मैं छोटा था
भोला वचपन था चिन्ता से
कोसों दूर था।
भोले वचपन का साथी मैं,
कारें मन वालों का साथ!
अब तो केवल यादें रह गई–
झीनी झीमी उस प्यारे बचपन की।[9]

2. मानवीय संवेदना

'मानव' मनुष्य की संतान, मनुष्य को कहा जाता है। इस प्रकार मानवता का अर्थ है– मनुष्यता।[10] इस प्रकार मानवीय संवेदना का अर्थ है, जिसमें मनुष्य व उसकी मनुष्यता को केन्द्र में रखकर साहित्य की रचना की जाती है। काव्य रचना मे कभी शक्ति और कभी श्रृंगार को प्रमुख आधार माना जाता रहा है किन्तु आधुनिक काल तक आते–आते अधिकांश काव्य का केन्द्र मात्र मानव बनकर रह गया है। मानव व मानवीय संवेदना ही काव्य का मुख्य आकर्षण बन गयी है। मानव–प्रेम व्यक्ति की अन्तश्चेतना के परिष्कार का अत्यन्त विकसित सोपान है। व्यक्ति की चेतना जब घर–परिवार, नगर, ग्राम से आगे बढ़कर देश की भौगोलिक सीमाओं को पार की सम्पूर्ण मानव मात्र को अपनी सीमा में समेट लेती हैं तो व्यक्ति की चेतना के इस विकास और परिष्कार को मानव प्रेम

कहते हैं। विश्व प्रेम इस मानव प्रेम का ही पर्याय है। मानव प्रेम से ओत–प्रोत महापुरूषों का हृदय विशाल और उदार होता है। वह सम्पूर्ण मानव मात्र के सुख–दुख से हर्शित और द्रवित हो जाता है और मानव–जाति के लिए कल्याण की कामना करता है। उसका मन वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से ओत–प्रोत रहता है। कवि डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य का मुख्य केन्द्र मानव है। उन्होने व्यवस्था और समाज के संदर्भ में मानव का अध्ययन कर यथार्थ और व्यंग्य के स्तर पर प्रमाणिक अभिव्यक्ति दी हैं–

जन्मजात यह आदमी, है सद्गुण की खान।
जहाँ मिले अधिकार तो, रहे न फिर इंसान।।
गिरा इस क़दर आदमी, फैल रही दुर्गन्ध।
बात–बात में खा रहा, बच्चों की सौगंध।।
मौन खड़ा है आदमी, मचा हुआ है शोर।
लोग कहें क्यों हो रहा, क्रंदन चारों ओर।।[11]

रक्त सम्बन्धों में होने वाले भ्रष्टाचार की ओर ध्यान खीचते हुए कहते हैं कि–

रक्त–रक्त के सम्बन्धों पर,
भ्रष्टाचार हुआ है हावी।
बदल गए ममता के मानक,
कहाँ जा रही भावी पीढ़ी।।[12]

डॉ० महेश 'दिवाकर' अपने ही माध्यम से कहते हैं कि कुछ होने से पहले आदमी होना ज़रूरी है। आज व्यक्ति बड़ी–बड़ी बातें करता है लेकिन उसका आचरण और व्यवहार मानवता विरोधी है। वह एक अच्छा और सच्चा आदमी नहीं बन पाया है–

''पहले बनों आदमी प्यारे।
गिनों बाद में नभ के तारे।।
कविता करना नहीं ज़रूरी।
मानव के गुण सीखो सारे।।
लोग स्वार्थ में जकड़ लिए हैं।
नित्य कर रहे वारे–न्यारे।
बंधु जीतनी है यह दुनिया।
पर हित–कर्म करो सब प्यारे।।''[13]

3. सामाजिक संवेदना

प्रत्येक रचना के रचयिता के अपने व्यक्तित्त्व के साथ–साथ सामाजिक व्यक्तित्त्व भी अभिव्यक्त होता है। व्यक्तित्त्व की विद्यमानता के नाते जहाँ कृतिकार की कृति निजीपन (वैयक्तिक) लिए होती है, वहाँ सामाजिक इकाई होने के कारण कृतिकार अपने युग की संवेदना और युगीन संस्कार का धारणकर्त्ता भी होता है। साहित्य इतिहास के पृष्ठों में अपना स्थान तभी बना पाता है, जब उसका रचयिता युग के अनुरूप सष्जन करता है। उसी रचनाकार का व्यक्तित्त्व एवं कृतित्व सुरक्षित रह पाता है जो जीवन समाज और कला एवं साहित्य को कुछ स्पृहणीय दे जाता है।[14]

कवि युग सृष्टा होता है। वह अपनी रचनाओं में युगीन समाज के कड़वे सच को वाणी प्रदान करता है। उसका कथ्य किसी अकेले व्यक्ति का न होकर पूरे समाज का होता है। उसमें अपने समय की आत्मा को भली प्रकार अभिव्यक्त कर पाने के लिए निरन्तर एक पुनर्गठन की प्रक्रिया मिलती है। कवि डॉ० महेश 'दिवाकर' ने सामाजिक संवेदना को उसकी व्यापकता में स्वीकार किया है। इसलिए उनका काव्य मात्र काव्य न होकर सामाजिक संवेदना की सशक्त अभिव्यक्ति है। उनका काव्य प्रगतिवाद में प्रभावित दिखाई देता है। सामाजिक चेतना प्रगतिवाद की एक प्रमुख विशेषता हैं। वे नई पीढ़ी को भी मानवता का संदेश देते हैं –

देश धर्म पर प्यारे, कर दो सभी समर्पण।
मानवता की सेवा में कर तन मन अर्पण।।
अन्त समय सब छूट यहीं धरती पर जाये।
युग–युग करता याद रहेगा जीवन तर्पण।।[15]

उन्होंने दया, धर्म, सत्य, अहिंसा को मानव कल्याण के लिए आवश्यक माना है–

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
सत्य–अहिंसा–मूल है, सकल जगत कल्यान।।

x x x x

मानव सेवा से बड़ा, नहीं जगत में कर्म।
पीड़ा जन को बाँटना, मानवता का धर्म।।

x x x x

अपने दुख को दुख कहें ऐसे यहाँ अनेक।
पर पीड़ा जो मानते, सौ में विरला एक।।[16]

डॉ० महेश 'दिवाकर' ने मज़हब, धर्म के नाम पर बाँटने वाले लोगों का विरोध करते हुए लिखा है कि –

ये हिन्दु हैं, ये मुस्लिम है, बनते सिख ईसाई।
एक वर्ण है, धर्म भिन्न है, कैसी आग लगायी।।
भेद भाव अति द्वेश–घृणा है, शूल खड़े आंगन में।
मनुज–मनुज का दर्द न जाने, फटी न पैर विबाई।।[17]

राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार को देखकर कवि का मन आहत होता है। वे अपनी लेखनी के माध्यम से सन्देश देना चाहते है कि आज के समय में राजनीति व्यापार जैसी हो गयी है इसलिए हमें इन लोगो से सावधान रहने की आवश्यकता है –

राजनीति–व्यापारी हैं, नेता नहीं, भिखारी हैं।
सावधान इनसे रहना, बिगड़े हुए शिकारी हैं।।
जात–पात को गाते हैं, भेदभाव फैलाते हैं।
छुआ छूत पैदा करते, सबसे बड़े मदारी हैं।।[18]

अपने काव्य में वे स्थान–स्थान पर समाज के लिए मंगल कामनाएँ करते हुए भी दिखाई देते हैं–

मंगलमय हो जन्म दिन, जियो धर्म के हेतु।
उर–नभ ईश्वर भक्ति का, रहे लहराता केतु।। [19]

4. राष्ट्रीय संवेदना'

'किसी भू–भाग विशेष के मानवों की विकास प्रक्रिया जब समान आतंरिक संस्कारों समान वैचारिक चेतनाओं, समाज राजनीतिक एवं धार्मिक आस्थाओं से अनुप्रेरित हो एक संगठन के रूप में विकसित होती है तब उस संगठन को राष्ट्र की संज्ञा दी जाती है। इस संगठन के विकास, उन्नयन और हितार्थ जो–जो क्रियाएँ व आस्थाएँ, घटनाएँ व चेतनाएँ विकसित होती हैं उन सभी के सामूहिक रूप को राष्ट्रीयता कहते है।''[20]

किसी रचनाकार की राष्ट्र के प्रति जो अनुभूति होती है, वह उसकी राष्ट्रीय संवेदना है। राष्ट्रीयता एक ऐसा प्रबल भाव है कि इसकी शक्ति के सामने अनेक महापुरूषों ने स्वतन्त्रता की वेदी पर स्वयं को समर्पित कर दिया है। राष्ट्रीय भावना सभी कालों में व्याप्त रही है। साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से लोगों के मन में राष्ट्रीय संवेदना को जाग्रत करने का प्रयास किया है। साहित्य के माध्यम से ही जनमानस में राष्ट्रीय भावों का स्फुरण करके नव निर्माण का भाव जगाया जा सकता है।

डॉ० महेश 'दिवाकर' यह कामना करते है कि हम सब भारतीय साक्षर हों, सामाजिक समस्याओं का निराकरण करें ताकि देश उन्नति के पथ पर अग्रसर हो। आवश्यकता पड़ने पर देश के लिए प्राणों का बलिदान करने से भी हमें पीछे नहीं हटना चाहिए–

नहीं झुके हैं
नहीं झुकेंगे
ऐसा खून भरा है रग में।
संकट चाहें कितने आये
सीनातान चलेंगे मग में।।
आजादी हित,
मिटने वाले
बलिदानों से कब डरते हैं,
ऐसा है इतिहास हमारा,
फाँसी पर हँसकर चलते हैं।
नहीं डिगेंगे
जब तक स्पन्दन है जग में,
नहीं झुके हैं।[21]

कवि का हृदय राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है। उनके मन में देशभक्ति की निष्छल भावना दिखाई देती है–

जीवन काम देश के आये।
मेरी आयु उसे लग जाये।।
बलिदानों की यह धरती है।
किस में साहस आँख मिलाए।।[22]

इसी प्रकार की भावना एक अन्य स्थान पर भी दिखाई देती है–

भारत का सम्मान चाहिए।
लेश नहीं अपमान चाहिए।।
मुझे शीश माँ के चरणों में।
भक्ति भाव वरदान चाहिए।।
मुझको देना जन्म राम जी।
मेरा देश महान चाहिए।।
मेरी जन्म भूमि भारत हो।
राम कृष्ण शिव मान चाहिए।।[23]

देश को स्वतन्त्र कराने में योगदान देने वाले देशभक्तों को कवि शत–शत प्रणाम करता है–

राष्ट्र भाषा के उन्नायक! भारत माँ के लाल ललाम।
त्याग समर्पण के परिचायक। जीवन था कैसा निष्काम।
भारतवासी ऋणी रहेंगे, व्यर्थ न जाएगा बलिदान।
याद रहेगा युगों तक, राजर्शि शत–शत प्रणाम।। [24]

डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में देश–प्रेम के सच्चे स्वरूप के दर्शन होते है। उनकी कविताओं में देश–प्रेम की संवेदना की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई है। इस प्रकार डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में संवेदना पग–पग पर झलकती है। वे भारतीय संस्कृति के अनन्य सेवक हैं। मानवीय मूल्यों में उनकी गहन आस्था है। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना को अभिव्यक्त करती हुई उनकी ये पक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

भारत का उपहार है।
विश्व एक परिवार है।।
रही युगों से भूमिका।
जन–जन पर उद्वार है।।
सुख–दुख मिलकर बाँटना।
मानवता का सार है।।[25]

इस प्रकार डॉ० महेश 'दिवाकर' के काव्य में संवेदना के विविध आयाम दृष्टिगोचर हेाते हैं।

सन्दर्भ

1. शर्मा, द्वारका प्रसाद. सम्पा०. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ।
2. शर्मा, डॉ० हरिचरण. सर्वेश्वर का काव्य, संवेदना और सम्प्रेषण. पृष्ठ **103.**
3. गुप्त, देवी प्रसाद. साहित्य, सिद्धान्त और समालोचना. पृष्ठ **23.**

4. गुप्त, डॉ० कृष्ण चन्द्र. छायावादी कवियों का काव्यदर्श. पृष्ठ **76.**
5. वर्मा, महादेवी. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध. पृष्ठ **160.**
6. अमृतराय. सहचिंतन. पृष्ठ **41.**
7. कुमारी, डॉ० राकेश. मोहन राकेश के कथा साहित्य का संवेदना पक्ष. पृष्ठ **44.**
8. डॉ० महेश 'दिवाकर'. लोकधारा–3. पृष्ठ **22.**
9. डॉ० महेश 'दिवाकर'. लोकधारा–3. पृष्ठ **229.**
10. प्रसाद, कलिका. सम्पा०. वृहत् हिन्दी कोष. पृष्ठ **234.**
11. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा 1. पृष्ठ **329, 330.**
12. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा 2. पृष्ठ **68.**
13. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा 5. पृष्ठ **44.**
14. शारदा बंसल–राकेश की कहानियों में युग बोध. पृष्ठ **34.**
15. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–2. पृष्ठ **173.**
16. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–1. पृष्ठ **37.**
17. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–6. पृष्ठ **176.**
18. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–6. पृष्ठ **108.**
19. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–6. पृष्ठ **280.**
20. त्रिणुगोयन, डॉ० गोविन्द. नवीन साहित्यिक निबन्ध. पृष्ठ **316.**
21. दिवाकर, डॉ० महेश. आस्था के फूल. पृष्ठ **04.**
22. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–5. पृष्ठ **35.**
23. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–6. पृष्ठ **15.**
24. दिवाकर, डॉ० महेश. आस्था के फूल. पृष्ठ **242.**
25. दिवाकर, डॉ० महेश. लोकधारा–5. पृष्ठ **18.**